आधुनिक रामकाव्य में मानव और प्रकृति के पारस्परिक संबंधों का स्वरूप

पूनम रानी पुत्री श्री रामेष्वर दयाल

षोधार्थी (पीएच.डी.)
महर्षि दयानन्द विष्वविद्यालय, रोहतक (हरियाणा)

रामकाव्य वस्तुतः प्रागेतिहासिक युग से वर्तमान युग तक के जनमानस को प्रभावित एवं आन्दोलित करने वाले नैतिक, आध्यात्मिक, सामाजिक एवं राजनैतिक मूल्यों का प्रतिबिम्ब है। इसी तरह अनादिकाल से प्रकृति मानव के भावात्मक एवं बौद्धिक विकास में अनवरत योग देती आयी है। प्रकृति और मानव के रागात्मक स्पंदनों की क्रिया–प्रतिक्रिया का क्रम आज के संघर्ष–संकुल जीवन में भी अविच्छिन्न है। प्रकृति के उन्मुक्त क्षेत्र में ही उसके जीवन का वैविध्यपूर्ण व्यापार गतिषील होता रहा है। वैदिक गीतात्मक से लेकर अव्याधुनिक काव्य तक प्रकृति का अनेक रूपतामक विस्तार दृष्टिगत होता है। आदिकाव्य रामायण में आरण्यक संस्कृति की सात्त्विक विराटता तथा सांस्कृतिक मूल्यों की आदिम स्थापना का जैसा भव्य एवं निश्छल निरूपण है वैसा अन्यत्र अलभ्य है। उनके प्राकृतिक दृश्यों के वर्णन में प्रकृति के षुद्ध स्वरूप और स्वच्छन्द क्रीड़ा की जो मार्मिकता है वह परवर्ती काल में नागरिक संस्कृति की नियमबद्धता तथा जटिलता के कारण कृत्रिम एवं रूढ़िबद्ध होती गई। वाल्मीकि ने प्राकृत दृष्यों का बड़ा ही मनोरम वर्णन किया है। वाल्मीकि के इस प्राकृत दृष्यों का सूक्ष्म निरीक्षण का स्तवन करते हुए आचार्य षुक्ल कहते हैं– ''वर्षा में पर्वत के गेरू से मिलकर नदियों की धारा का लाल होकर बहना, पर्वत के ऊपर से मोटी धारा का काली घाटियों में छितराना, पेड़ों पर गिरे वर्षा जल का पत्तियों की नोकों से बूँद–बूँद टपकना और पक्षियों का उसे पीना, हेमंत में भी कमलों के नालादि का खड़ा रहना और उसके छोर पर केसर का छितराना ऐसे–ऐसे व्यापारों को वे सामने लाते चले गए है।''[1]

आधुनिक युग में पाष्चात्य संस्कृति एवं सभ्यता के कारण स्वच्छन्दतावादी प्रवृति को बल मिला। प्रकृति केवल उद्दीपनगत व्यापारों की निर्जीव चित्र–मालिका या अलंकृत चित्र–वर्णन की तालिका–मात्र न रहकर एक जीवंत रागात्मक स्पंदन में ढलती प्रतीत होती है। मध्ययुग की रागबद्धता और अलंकृति के प्रति यह विद्रोह का आरम्भ था। ''रामकाव्य आधुनिक मानसिकता का प्रतिफलन है, अतः कवियों के इस परिवर्तित दृष्टिकोण से वह दूर तक प्रभावित हुआ है। इन प्रेरक तत्त्वों में स्वच्छंदतावादी प्रभाव के अतिरिक्त कुछ अन्य तत्त्व भी प्रमुख हैं – बुद्धिमान का प्रभाव, आधुनिक वैज्ञानिक दृष्टि, उद्योगीकरण, मानववाद एवं नवीन दार्षनिक चेतना आदि।''[2] आधुनिक युग में स्वच्छेदतावाद के प्रभाव के कारण जहाँ औद्योगिक क्रांति से ग्रस्त युग में प्रकृति के उन्मुक्त रूप के प्रति कवियों की संवेदनषीलता जाग्रत हुई वही दूसरी ओर वैज्ञानिक दृष्टिकोण के फलस्वरूप उसकी विनाष–कारिणी भयावह शक्तियों को नियंत्रित करके संस्कृति का पथ प्रषस्त करने की ओर भी उनकी दृष्टि गई। ''आधुनिक काव्य में प्रकृति के दोनों रूपों का वर्णन है। 'कामायनी' में वैज्ञानिक मंत्रवाद की इस परिणति की ओर स्पष्ट संकेत मिलता है। साथ ही मंत्रवाद के विरोध में प्रकृति की उन्मुक्त रूपोपात्सना का आग्रह भी लक्षित है।''[3]

'साकेत' का कवि प्राकृतिक शक्तियों के प्रति आस्थाषील नहीं है। परन्तु उसका स्वार्थमय प्रयोग उसे भी कबूल नही हो सका। बहते हुए स्वच्छंद नद का देखकर राम जहाँ उसके उन्मुक्त–स्वतंत्र सौन्दर्य से अभिभूत हुए बिना नहीं रहते, वही वह जन–कल्याण के लिए उसके नियमित उपयोग का भी समर्थन करते है :

देखो, कैसा स्वच्छंद यहाँ लघु नद है।
इसको भी पुर में लोग बांध लेते हैं,
हाँ, वे इसका उपयोग बढ़ा लेते है।''[4]

यांत्रिक–अनुषासन मानव की प्राकृतिक शक्तियों को क्षीण तथा संवेदना को कुंठित करता है, उसके विरूद्ध मैथिलीषरण गुप्त जी ने अपना स्वर मुखर किया है :

पर बंधन भी क्या स्वार्थ –हेतू समुचित है।[5]

औद्योगिकरण और बढ़ती भौतिकता के कारण यह सजगता आधुनिक प्रकृति–काव्य की एक प्रमुख विषेषता है।

रामकाव्य में राम के जीवन से संबंधित अनेक घटनाएँ प्रकृति की गोद में घटित होती है। किषोरवस्था में विष्वामित्र के साथ वन में घटित घटनाएँ। चौदह वर्ष के वनवास में चित्रकूट से लेकर दण्डकाव्य और फिर सुदूर लंका तक दक्षिणापथ राम के क्रियाकलापों की क्रीड़ास्थली रहा है। राम के राज्याभिषेक के बाद सीता के निर्वासन की घटना सामने आती है। निर्वासन के समय सीता का षेष जीवन वाल्मीकि के आश्रम में वन्य–प्रकृति के साहचर्य में व्यतीत होता है।

आधुनिक रामकाव्य में प्रकृति–चित्रण की वे सभी प्रणालियाँ दृष्टिगोचर होती है जो परम्परा– प्राप्त रही है। आलम्बन, उद्दीपन, अलंकरण, मानवीकरण, संदेष–कथन की परम्पराओं का स्वाभाविक निर्वाह आधुनिक रामकाव्य में देखा जा सकता है। मध्यकालीन कवि की भांति आज का कवि प्रकृति में केवल अपनी विलास–भावनाओं को उद्बुद्ध करने वाली सामग्री नहीं खोजता, अपितु उसके स्वतंत्र अस्तित्व को स्वीकार करते हुए वह उसे अपने स्वायत षासन की साम्राज्ञी उद्घोषित करता है। वह प्रकृति के अविकृत मौलिक स्वरूप में आस्था व्यक्त करता है –'' यह प्रकृति षुद्ध है परम षुद्ध।''[6]

मैथिलीषरण के अनुसार –

मानो यह है भुवन भिन्न ही, कृत्रिमता का नाम नहीं।
प्रकृति अधिष्ठात्री है इसकी, यहा विकृति का नाम नही।।[7]

वस्तुतः प्रकृति की ओर प्रत्यावर्तन का जो स्वर स्वच्छन्दतावादी काव्य में मुखरित हुआ है उसकी स्पष्ट प्रतिध्वनि अनेक स्थलों पर सुनी जा सकती है। 'पंचवटी–प्रसंग' की सीता राजभवन की अपेक्षा वन–भूमि के अकृत्रिम सौन्दर्य का आनंद लेती है :

ओर कहाँ सुनती मैं
सुखद समीरण में विहग कलकूजन–ध्वनि
पत्रों के मर्मर में मधुर गंधक गान
और कहाँ पीती मैं श्रीमुख की अमृत–कथा
और कहाँ पाती मैं
विमल विवके ज्ञान भक्ति दीप्ति
आश्रम तपोवन छोड़।''[8]

रामकाव्य में प्रकृति के उद्दीपन वर्णन के साथ–साथ उसका आलम्बनगत वर्णन भी देखने को मिलता है। उदारहणार्थ 'विद्रोह' के अष्टम सर्ग में मिथिला की प्रकृति का चित्रण प्रस्तुत है जिसमें स्वच्छंद प्राकृतिक विभूतियों के सम्पर्क में आने पर जगने वाले भाव को ही कवि प्राथमिकता देता है, उसे एकांततः भुक्ति, मुक्ति अथवा भक्ति के साधन मात्र में पर्यवसित नही कर देता :

प्रिय नील गगन–नव षुभ्र षरद के नवल चरण
उज्जवल घन–घँघरू बाँध सरोवर–दपर्ण में करते विचरण
ष्षत–षत कोमल अधखुले कमल, षोभा–सरोजिनी से खुल–खिल
कर रहे कथाएँ पुरइन के पल्लव–वितान की छाया में।[9]

''उपर्युक्त पंक्तियाँ मिथिला के भुक्ति–परक रागात्मक ऐष्वर्य से संबध है किंतु यहाँ उपादानों की योजना इतने संष्लिष्ट रूप में हुई है कि प्रकृति के बाह्य रूप को प्रमाता की भावना आलम्बन रूप में ग्रहण कर सकती है।''[10]

रामकाव्य में ऐसे अनेक चित्रण देखने को मिल जाते है, जो स्पष्टतः उद्दीपन परकता से भिन्न अपना स्वतंत्र अस्तित्व रखते है। 'पंचवटी' का प्रारम्भिक वर्णन इसका साक्षी है :

चारू चन्द्र की चंचल किरणे खेल रही है जल–थल में,
स्वच्छ चाँदनी बिछी हुई अवनि और अम्बरतल में।
पुलक प्रकट करती है धरती हरित तृणों की नोकों से,
मानो झीम रहे हैं तरू भी मन्द पवन के झोकों से।।[11]

इसी प्रकार राम की करूण दषा को देखकर हनुमान के क्रोधित होने पर प्रलयकालीन दषा का यह कल्पना–चित्र उनके व्यक्तित्व की पृष्ठभूमि होने पर भी स्वतंत्र संष्लिष्ट अस्तित्व रखता है तथा प्रस्तुत से कम संवेद्य नहीं है।

षत घूर्णावर्त, तरंग–भंग, उठते पहाड़,
जल–राषि राषि–जल पर चढ़ता खाता पहाड़।
तोड़ता बंध–प्रतिसंध, धरा हो स्फीत–वक्ष,
दिग्विजय–अर्थ प्रतिफल समर्थ बढ़ता समक्ष।
षत–वायु–वेग–बल, डुबा अतल में देष–भाव,
जल–राषि विपुल मथ मिला अनिल में महाराव।।[12]

दूसरे हनुमान जिस हुंकार के साथ समस्त आकाष को निगलने के लिए तैयार हो रहे हैं उसमें प्रकृति क्रोध–भाव की आलम्बन ही है।

प्रकृति मानव की मनोदषाओं का वर्णन अपने अनेक रूप–व्यापारों के बीच छाया रूप में करती है। 'जानकी मंगल' में राम के राज्याभिषेक के सन्दर्भ में सूर्योदय का मनोहारी वर्णन उल्लास एवं उत्सायमयी भूमिका निर्मित करती है :

पक्षी जगे, चहचहा कर चाव से ज्यों,
गाते प्रषस्ति यष चारण हो जागते।
प्रारम्भ थी परम–पावन प्रात–संध्या,
गाने लगे सजग मानव की प्रभाती।।[13]

मध्ययुगीन काव्यों में प्रकृति का उपयोग वैषमय की अपेक्षा प्रतिबिम्ब रूप में अधिक देखने को मिलता है। मानस में राम के वनवास चले जाने पर अयोध्या के वन, सरिता, बाग इत्यादि श्रीहीन हो जाते हैं।

प्रकृति के विविध रूप–व्यापारों में मनुष्य न केवल अपने अंतस् की प्रतिछाया देखता है, अपितु अपनी जीवन–दृष्टि को निर्मित करने वाले विविध नैतिक–आध्यात्मिक मूल्यों की पुष्टि के लिए अनेक उपादान भी खोज निकालता है। नैतिक उपदेष ग्रहण करने के लिए मध्ययुगीन कवियों ने भी प्रकृति का ऐसा उपयोग किया है। 'मानस' के वर्षा –वर्णन में प्रकृति अनेक नैतिक संदेष देती है।

उपेदषात्मकता के समान ही भावों के अलंकरण में भी प्रकृति का महत्त्वपूर्ण योग रहा है। यहाँ भी प्रकृति का स्वतंत्र अस्तित्व गौण अलंकरण–पक्ष ही प्रधान रहा है। लगभग आधुनिक रामकाव्यों में अलंकरण के रूढ़िबद्ध प्रयोग ही देखने को मिलते है। यहाँ सूर्य तथा उसके संबंद्ध दृष्यों के अलंकृत प्रयोग प्रस्तुत है –

''जो आज्ञा'', – लक्ष्मण गये तुरंत कुटी में,
ज्यों घुसे सूर्य–कर–निकर सरोज–पुटी में।।[14]

भाभी रोती नही, धरा पर तुहिन–रषिम की ढलती है।[15]

इस प्रकार मेघ, आँधी तथा वर्षा का उपयोग ध्वंस एवं विनाष के चित्रों में परम्परागत रूप में देखने को मिलता है।

आधुनिक युग में प्रकृति वर्णन में परम्परित पद्धतियों का ही विस्तार हुआ है। साथ ही आधुनिक काव्य में रोमांटिक आन्दोलन के प्रभाव के कारण प्रकृति के स्वच्छंद सहज जीवन के प्रति अनुराग बढ़ा है, रामकाव्य भी उससे गहन स्तर पर आन्दोलित हुआ है। मानव और प्रकृति के अन्तः सम्बन्धों का जैसा व्यापक विधान आधुनिक युग में हुआ है, वैसा पहले कम देखने को मिलता है। प्रकृति का मनोरम स्तर पर विधान तथा मानव–स्पर्ष से प्रकृति की सार्थकता का चित्रण करके तथा कहीं प्रकृति के योग से मानवीय व्यापारों का प्रतिफल दिखाकर मानव और प्रकृति के बिम्ब–प्रतिबिम्ब भाव का मार्मिक वर्णन इन कवियों ने किया है।

सन्दर्भ ग्रन्थ :–

1. आचार्य रामचन्द्र षुक्ल : रस मीमांसा, पृष्ठ 99
2. डॉ0 रामेष्वर लाल खण्डेलवाल, पृष्ठ 116–117
3. प्रेमचन्द महेष्वरी : हिन्दी रामकाव्य का स्वरूप एवं विकास, पृष्ठ 358
4. मैथिलीषरण गुप्त : साकेत, सर्ग 8, पृष्ठ 230
5. वही पृष्ठ 230
6. पोद्दार रामावतार षर्मा 'अरूण' – विद्रोह, सर्ग 2, पृष्ठ 29
7. मैथिलीषरण गुप्त – पंचवटी, पृष्ठ 17
8. पंचवटी – प्रसंग (अनामिका) पृष्ठ 216
9. पोद्दार रामावतार षर्मा 'अरूण' – विद्रोह, सर्ग 8, पृष्ठ 127
10. आचार्य रामचन्द्र षुक्ल, रस मीमांसा, पृष्ठ 9
11. मैथिलीषरण गुप्त – पंचवटी, पृष्ठ 5
12. निराला – राम की षक्ति पूजा, (अपरा), पृष्ठ 47
13. जानकी–जीवन, सर्ग 5, पृष्ठ 87
14. मैथिलीषरण गुप्त : साकेत, सर्ग 8, पृष्ठ 265
15. रघुवीरषरण 'मित्र' – भूमिजा : महल का दीप, पृष्ठ 79